P: ISSN NO.: 2321-290X RNI : UPBIL/2013/55327 VOL-7* ISSUE-12* August- 2020
E: ISSN NO.: 2349-980X **Shrinkhla Ek Shodhparak Vaicharik Patrika**

# छत्तीसगढ़ी लोक वासियों का वीर नृत्यः सैला

# Saila : The Chattisgarh Folk Heroic Dance

Paper Submission: 16/08/2020, Date of Acceptance: 26/08/2020, Date of Publication: 27/08/2020

**पूर्णिमा अग्रवाल**
सहा. प्राध्यापक,
हिन्दी विभाग,
अम्बाह पी. जी. कॉलेज,
अम्बाह, मुरैना, म.प्र., भारत

**सारांश**

सैला का सामान्य अर्थ डण्डा भी है। यह नृत्य डण्डों के सहारे किया जाता है। इसलिए छत्तीसगढ़ में इसे डण्डा नाच कहा जाता है। डण्डा लेकर नृत्य करने वाले नर्तकों को डण्डाकार कहते है। इस नृत्य के साथ जो गीत गाया जाता है, उन्हें डण्डा गीत के नाम से जाना जाता है। वनों में जीवन व्यतीत करने वाले आदिवासियों के लिए डण्डा उनका सबसे बड़ा शस्त्र है। जिसके द्धारा वे हिंसक पशुओं से अपनी रक्षा करते है। इस नृत्य में डण्डा, भाला, तलवार आदि अस्त्र–शस्त्रों के प्रयोग की शैलियां देखने को मिलती है। वीर रस युक्त यह नृत्य पुरातन भारतीय वीरता का प्रतीक है। यह ऐसा नृत्य है जो शान्ति काल में लोकवासियों के मनोरंजन करने के साथ ही उन्हें युद्ध में लड़ने के लिए प्रेरणा देता रहा है।

The general meaning of Saila is "Stick" . This is the dance form which is performed with the help of stick so it is also known as Danda Nach or Dandar Pate in the chattisgarh . Dancers holding sticks while dancing called Stick Dancers . Songs sing while dance are known as Danda -Geet . Tribal peoples living in the forests are treated stick as their weapon for protecting themselves from wild animals . The styles of sticks, spears and swords are usually seen in this dance. This heroic dance is a symbol of ancient indian bravery .This is the dance which was source of entertainment for tribal peoples as well as has been inspired them for fighting wars.

**मुख्य शब्द :** सैला नृत्य, छत्तीसगढ , आदिवासी संस्कृति, संगीत।
Saila Dance, Chattisgarh, Tribal Culture, Music.

**प्रस्तावना**

भारत देश में विभिन्न जाति, धर्म, संस्कृति के लोग एक साथ रहते हैं। भारत में संस्कृति की पहचान किसी एक व्यक्ति से नहीं होती, बल्कि समूचे राष्ट्र से होती है। इस राष्ट्र की एकता, अखण्डता, विश्वबन्धुत्व की भावना संगठित तभी रह सकती है, जब विभिन्न जातियों आदिवासी, जनजाति बहुल क्षेत्रों में उनके तीज, त्यौहार, रीति–रिवाज और परम्परा को बनाये रखने के लिए गीत, संगीत नृत्य को उत्साह उमंग से सभी मनाएँ, जिससे हम आदिवासी इलाकों की संस्कृति को अपना कर एक–दूसरे की लोक संस्कृति, लोक साहित्य के द्वारा अपनत्व की भावना से जुड़ कर समाज को एक नई दिशा प्रदान करें । इसके लिए हमें विभिन्न संस्कृतियों को अपनाना होगा। उसी में एक संस्कृति छत्तीसगढ़ का लोक संगीत है, जो फसलों के काटने, बोने के समय गाया एवं नृत्य किया जाता है।

नृत्य सृष्टि का आनन्दमय स्वरूप है। भारतीय संस्कृति में नृत्य उत्कृष्ट माना है। प्राचीन समय में राजा–महाराजाओं के दरवार में नर्तक मनोरंजन के रूप में विभिन्न भंगिमाओं के द्धारा नृत्यकर सभी लोगों को प्रसन्न करते थे। पशु–पक्षी भी वातावरण के अनुकूल आनन्दमय हो जाते थे। मोर बरसात के प्रारम्भ होने पर नाच कर अपनी प्रसन्नता व्यक्त करता है। यदि मनुष्य के जीवन में सुर–ताल और नृत्य न हो, तो उसका जीवन नीरस हो जाता है। भगवान शंकर की नृत्य मुद्रा में नटराज की मूर्ति विश्वविख्यात है। भगवान कृष्ण ने विभिन्न लीलाओं में नृत्य को प्राथमिकता दी। समस्त संसार में नृत्य विधा ही मनुष्य को आनन्दमय बना देती है। अपने देश में विभिन्न भाषा–भाषी जाति–धर्म वर्ग के लोग रहते है। सभी की अपनी–अपनी भाषा, संस्कृति, परम्परा है। भारतदेश में एक छत्तीसगढ़ राज्य है। जिसका प्रमुख नृत्य सैला है। जो सैल पर्वत का ही विकृत रूप है। यह पर्वतों पर नृत्य किये जाने के कारण ही यह

सैला नृत्य कहलाया। छत्तीसगढ़ की आदिम जातियों में सैला नृत्य प्रचलित है। केवल पुरुषों द्वारा ही किया जाता है। यह कला विेशेष रूप में गोंड जाति का वीर नृत्य है। गोंड जाति के लोगों को आज भी विश्वास है, कि युगों से उनके पूर्वजों ने राम–रावण के युद्ध में भगवान राम का साथ दिया था तथा राम द्वारा रावण को पराजित करने के कारण यह नृत्य परम्परागत रूप में होता आ रहा है। 'सैला' नृत्य का संबंध कृष्ण की रास लीला; रासलीला' से भी है। तथा इस रास नृत्य से ही इसका प्रार्दभाव हुआ हैं, यह नृत्य भारत के सभी वनांचलों में किया जाता है। ग्रामीण अंचलों में नवयुवक बहुत ही उल्लास के साथ नृत्य करते है। संस्कृत साहित्य में भी इस नृत्य का उल्लेख मिलता है। संस्कृत में इसे लकुट नृत्य या रासक कहा गया है। भरतमुनि के अनुसार–रूपक के तीन भेद है–1 ताल रासक 2–दण्ड रासक 3–मण्डल रासक। इसमें दण्ड रासक डण्डों को परस्पर बजाकर किया ताने वाला नृत्य है। [01]

सैला का सामान्य अर्थ डण्डा भी है। यह नृत्य डण्डों के सहारे किया जाता है। इसलिए छत्तीसगढ में इसे डण्डा नाच कहा जाता है। डण्डा लेकर नृत्य करने वाले नर्तकों को डण्डाकार कहते हैं। इस नृत्य के साथ जो गीत गाया जाता है, उन्हें डण्डा गीत के नाम से जाना जाता है। वनों में जीवन व्यतीत करने वाले आदिवासियों के लिए डण्डा उनका सबसे बड़ा शस्त्र है। जिसके द्वारा वे हिंसक पशुओं से अपनी रक्षा करते है। इस नृत्य में डण्डा, भाला, तलवार आदि अस्त्र–'शस्त्रों के प्रयोग की शैलियां देखने को मिलती है। वीर रस युक्त यह नृत्य पुरातन भारतीय वीरता का प्रतीक है। यह ऐसा नृत्य है जो शान्ति काल में लोकवासियों के मनोरंजन करने के साथ ही उन्हें युद्ध में लड़ने के लिए प्रेरणा दे रहा है। प्राचीन काल में यह नृत्य, मन मे वीरोचित भावना उत्पन्न करने तथा हीन–भावना को दूर करने के लिए किया जाता है। अतः अन्य नृत्यों से पृथक इस नृत्य की अपनी विशिष्ट शैली है। इस नृत्य से अनुशासन ,संयम, प्रेम की प्रेरणा मिलती है। वर्तमान में यह नृत्य मनोरंजन का साधन मात्र ही रह गया है। कभी–कभी नर्तक लधु युद्ध द्वारा भी दर्शकों का मनोरंजन तथा बल पौरुष भी करते है।

**शैला नृत्य की प्रस्तुति**

यह नृत्य प्रायःकार्तिक माह की एकादशी से प्रारम्भ होकर फाल्गुन की पूर्णिमा तक होता है। गोंड और बैगा जातियों द्वारा दीपावली के अवसर पर इस नृत्य का विशेष रूप से प्रदर्शन किया जाता है। एक गांव के नृत्यकार सज–धज कर बड़े उत्साह के साथ दूसरे गांव में नृत्य समूह करने जाते है तथा वापसी पर समस्त गांव वालों की ओर से उन्हें भेंट दी जाती है। इस नृत्य में एक दल में पचास या इससे भी अधिक नर्तकों की प्रस्तुति होती है। नृत्यदल में एक गाने वाला, एक जोर से कुहकी देने वाला तथा एक मादर बजाने वाला होता है शेष सहयोगी के रूप में होते है।

प्रथम–कुहकी के पड़ते ही सभी साथी नृत्य करने के लिए पूर्ण रूप से तैयार हो जाते है। तथा डण्डे और स्वर मिलाना आरम्भ कर देते है।

दूसरी कुहकी–के पड़ते ही नृत्य प्रारम्भ हो जाता हैं। नृत्य के प्रारम्भ होते ही नर्तकों के पैर एक साथ कदम बढ़ाते हुए थिरकने लगतें है।

तीसरी कुहकी–के साथ नर्तक द्रुत गति के साथ नृत्य करने लगते है। लौटते हुए आगे के नर्तक पीछे तथा पीछे के आगे हो जाते है। वृत्ताकार स्थिति में नृत्य करते हुए कभी झुकते, कभी थिरकते, तो कभी मुड़ते है। कुहकी के इशारे पर ही नृत्य में धीमापन, तीव्रता एवं विविध परिवर्तन होता है।– [02]

**सैला नृत्य के विविध स्वरूप**

सैला नृत्य में शिकारी सैला, हरीनी सैला, लहकी सैला, बैठकी सैला, सर्पनृत्य सैला आदि अनेक स्वरूप है।

**शिकारी सैला**

यह नृत्य नर्तकों द्वारा सीधी पंक्ति में किया जाता है। इस नृत्य को करते हुए नर्तक कभी खड़े हो जाते है और कभी उछलकूद कर शिकार में हाका करने जैसा दृश्य प्रस्तुत करते है। कभी वह चक्र बनाते है और कभी नाच उठते है। इस दृश्य को देखकर प्रतीत होता है जैसे उन्होंने चक्र बनाकर अपने शिकार को धेर लिया है।

**हरीनी सैला**

इस नृत्य को मण्डलाकार स्थिति में किया जाता है। कभी नर्तक अपने धेरे को संकीर्ण बनाते है, तो कभी दीर्धाकार। हरीनी सैला का यह रूप विशेषकर विवाह के अवसर पर प्रदर्शित किया जाता है। इसमें नर्तक अपने हाथों को हवा में उछालते है कभी आगे, कभी पीछे जाते हुए दूसरे साथी के डण्डे से अपना डण्डा बजाते है। प्रतिस्पर्धा की भावना से ग्रस्त तथा दूसरों को हराने की प्रवृति के कारण सैला की यह विधि हरौनी कहलाती है। इस प्रवृति के कारण ही कहीं–कहीं विद्रोह की भावना उत्पन्न हो जाता है।

**लहकी सैला**

इस नृत्य में नर्तक वृत्ताकार स्थिति में नृत्य करते हुए गीतों को अधिक गाते है। यह नृत्य गीत प्रधान है। नृत्यगत युवक गीत गाते हुए तीव्र गति से इधर–उधर मुड़ते है। जिससे पैरों की गति में स्वाभाविकता आ जाती है।

**बैठकी सैला**

बैठकी सैला में नर्तक एक एड़ी के सहारे बैठ जाते है और दूसरा पैर फैलाकर परस्पर डण्डे बजाते हैं।

**सर्प नृत्य**

सैला नृत्य का एक विशिष्ट रूप है। इसमें जब नर्तक अपनी लम्बी पंक्ति बनाकर लचकते हुए आगे बढ़ते है। तो सर्प के समान सरकने की प्रतीति होती है।

इसके अतिरिक्त कुछ प्रमुख नृत्य जैसे चांचर, बैगर, झूमर तथा पनिहारी सैला आदि है।

**चांचर सैला**

यह नृत्य गोंड़ जाति का कलात्मक नृत्य है। इसं नृत्य के आरभ्भ में हाथ में छोटे–छोटे डण्डे लेकर वाद्य यंत्र के साथ नृत्य किया जाता है।

**झूमर सैला**

यह नृत्य दो दलों में विभक्त होकर कभी गोलाकार मण्डल में, तो कभी बिखर कर किया जाता है।

**पनिहारी सैला**

इस नृत्य में कुएँ से जल भरती हुई पनिहारिनी की रस्सी के कमजोर होने की भयाकुल भाव–भंगिमाओं का प्रदर्शन किया जाता है। –[03]

**सैला नृत्य गीत के विविध स्वरूप**

**दुर्धइया**

तरिहरि नाना, अब हरि नाना,तरि हरि नाना जोर।

**पनिहारिन सैला**

तना ननना नर हो,न नारीय नार।

**कोटरी झलक**

तन्ना हरि नाना, भैया,नन्ना है न गारा मां

**समधिन भेंट**

श्री तनारी ना मोरी, ना ना री से भाई, अव हरि नाना ना मोरी नाना जोर।

इसके अतिरिक्त मरूआ झूल, आधा झूल, भइस छंद आदि सैला नृत्य गीतों की अन्य शैलियां है।

**चरखा भांज**

गड़ हंकड़ के राजा को हय सभाव, ठग–'ठग बोकरा दादन खाया।1

**तीन तइया**

श्री तानरी नाना हो,ना एक नानरी ना।

**भाड़–दौड़**

वो दिन के तानरी नामोरी नान। इसके अतिरिक्त मरूआ झूल, आधा झूल, भइस छंद आदि सैला नृत्य गीतों की अन्य शैलियां है।–[04]

सैला नृत्य में गाये जाने वाले गीत अन्य नृत्य गीतों की भांति प्रत्येक समय नहीं गाये जाते। इनके गाने का विशेष निर्धारित समय है। सैला के भक्ति रस के गीत जिठौनी एवं पौष माह पूर्णिमा पर ही गाये जाते है।

**होली विषयक**

गीत फाल्गुन माह में गाये जाते है। जिन्हें फगुनहा गीत कहते है।

**बारहमासी गीत**

यह गीत किसी भी समय गाये जाते है।

सैला नृत्य गीतों को तीन वर्गो में विभक्त किया जा सकता है।

1. भक्ति विषयक गीत
2. होली विषयक गीत
3. बारहमासी सैला गीत

**भक्ति रस सैला गीत**

इन गीतों में कबीर, सूर और तुलसी की वाणी गुंजित होती है। श्रद्धालु भक्त कवीर की वाणी सूर के श्रीकृष्ण के बाल स्वरूप और तुलसी के राम इन सभी के पदों को बहुत आनन्द विभोर होकर गाते है। इन गीतों में भक्त ह्रदय की तल्लीनता, भाव–विह्वलता तथा ईश्वर के प्रति अनुराग एवं श्रद्धा निहित है। एक भक्ति विषयक सैला गीत है।

अपन कोनौं नहिं अय हो, बिगन राम रघुनन्दन
माटी के मटखोल बने अय, पथरा के दरवाजा
ऊपर टोप खीला मड़ गय,मन लड़य, फिरंगी राजा।
उल्टी कागज पुल्टी लिखना, संबलपुर पहुँचाये
करिया हड़िया के चाम–चमेटी, रईगड़ देखे जाये।–[05]

अर्थात् बिना राम के अपना कोई नहीं है। यह तन मिट्टी का धड़ा है। जिसमें पत्थर की भांति कठोर दरवाजा है। सिर में बुद्धि का राज्य है, जहाँ मन रूपी निरकुंश राजा लड़ता है। वह उल्टा–पुल्टा आदेश लिख कर भेजता है। शरीर के ऊपर कृष्ण वर्ण का आवरण चढ़ा है। यह शरीर मिट्टी की हड़िया के समान है। सांसारिक जीव को गढ़ में रहने की बहुत इच्छा है। अतः हे राम इतनी कृपा करें कि मुझ पापी का उद्धार आपके हाथों ही हो, जिससे इस भवसागर से पार हो सकूँ।

होली विषयक सैला गीत

यह फाल्गुन में ही गाये जाते है। सैला का फगुनहा गीत प्रस्तुत है।–यह होली के अवसर पर गाया जाता है।

तरि नरि न मोरे ना नारे भाई
फागुन महीना आइस भइया
हम तो खेलब फाग रे भाई।
वन तोला ले लाल दिखत हय,
फूले हय टेसू के फूल रे भाई
भर–भर रंग पिचकारी मारें,
किशन कन्हइया लाल रे भाई
वन में चिरइया पंड़की बोले,
सुवना बोले अगास रे भाई
खावन–पिवन में रस नहिं अय,
नहिं अय नंदके लाल रे भाई।–[06]

अर्थात् हे भाई, फागुन का महीना आ गया है चारों ओर फसलें लहलहा रहीं हैं। प्रत्येक मनुष्य उत्साह ,उमंग में एक–दूसरे पर रंग डालकर फाग खेल रहे है। टेसू के लाल फूलों से वन भी लाल दिखने लगे है। कृष्ण पिचकारी में रंग भर–भर कर डालते हैं। वन में चिड़िया चहक रही है। आकाश में कोयल कूक रही है। लेकिन कृष्ण नहीं आये, खाने –पीने में भी कोई रूचि नहीं रह गई है। अतः हे! ईश्वर अब तो मेरा उद्धार कर दो।

3–बारह मासी सैला गीत– बारहमासी गीतों में बारह महीनों का वर्णन तो होता ही है, साथ ही प्रकृति के विभिन्न उपादानों के माध्यम से विरही मन की सुन्दर झाँकी भी मिलती है।

'बरसा रितु बीते, स्याम सुन्दर नहीं आये
आषाढ़ महीना धूम –धूम मादर सावन
रिम–झिम बरसे।
भादों महिर गंभीर जनाये, कुंवार चंदेनी छिटके,
कार्तिक महीना सजे देवारी, अगहन भसम रमावे,
जोहत –जोहत तिल– तिल गाडें, पूस में जाड़ा
जनावे।
माघ महीना बंसत भावे, फागुन धूर खिलावे।
चैत जंवारा जोत जलावे,
जेठ जलन तरसावे च वोला
सुत उठ सूरूज गोहरावें, मोर जिन्हइया आवत नइये
दुख में काला सुनाओं , स्याम सुन्दर नहिं आये।–[07]

अर्थात् वर्षा ऋतु बीत गई, किन्तु श्याम सुन्दर नहीं आये आषाढ़ के महीने में बादल छा जाते है। सावन में रिमझिम पानी बरसता है। भादों ,माह में गभ्भीर घटाएँ उमड़ती है। क्वांर में चादंनी छिटक जाती है। कार्तिक माह में दीवाली मनाई जाती है। अगहन महीना तिल–तिल

कर बढने लगता है। पूस में भयंकर जाडा पड़ता है। माघ महीने में बसंत का सौन्दर्य देखते ही बनता है। फागुन में धूल उड़ने लगती है, और जेठ मास की ऊष्मा से तन–मन जलने लगता है। हे ! ईश्वर मैं तुम्हारी आराधना करती हूँ ,जाने क्यों मेरी प्रार्थना नहीं सुनते है। अब तो यह विरह बढ़ता ही जा रहा है।

**अध्ययन का उद्देश्य**

छत्तीसगढ़ी लोक नृत्य के माध्यम से अपने देश की संस्कृति, विभिन्न रीति–रिवाज, परम्परा आदि को पहचानने का अवसर मिलता है। आज युवा वर्ग को देश की संस्कृति को बचाये रखने के लिए पूर्ण उत्साह और समर्पण से आगे बढ़ना होगा। यह तभी संभव है, जब विभिन्न जनजाती के लोगों में आत्मीयता, निष्ठा, प्रेम को बनाये रखें तथा भेदभाव की स्थिति को समाप्त कर देश की उन्नति में सहायक बनें।

**निष्कर्ष**

सैला नृत्य के साथ गाये जाने वाले यह गीत स्वरों की ध्वनि के अनुकूल होते है। छत्तीसगढी वीर गीतों को नृत्य के साथ विभिन्न वाद्य–यत्रों मादर ,मृदंग, झांझ, टिमटी, बासुँरी, चिकारे आदि का प्रयोग विशेष रूप से किया जाता है। नृत्योत्सब में नर्तकों की वेशभूषा तथा साज–सज्जा ही नृत्य की पहचान होती है। सिर पर पगड़ी तथा कलंगी, पूरी बाहँ का सलूका, बाहों में कौड़ियों का बनाया हुआ बहुटा, पैरों में धुधँरू तथा पीठ पर मोर पंख सजे होते है। जो विभिन्न भंगिमाओं के द्वारा नृत्य की प्रस्तुति करते है। इन गीतों को सुनकर, देखकर रंगमंच जीवान्त हो उठता है। प्रत्येक प्रेक्षक के हृदय में भावों का उद्गार हो उठता है। जो चेहरे पर स्पष्ट दिखाई देता है। सैला नृत्य एवं गीत समस्त राष्ट्र को एकता के सूत्र में पिरोये हुए भारतीय संस्कृति की विभिन्नता में एकता को स्थापित करता है। जो छत्तीसगढ़ी वासियों की विशिष्ट पहचान है।

अतः इस संसार में संगीत ही ऐसी विधा है। जिसमें विभिन्न पशु–पक्षी, पेड़ पौधे जीव जगत्, मनुष्य अपनी प्रतिक्रिया स्वर, ताल, वाध यंत्र, नृत्य आदि से अपने भावों की अभिव्यक्ति करता है। उसमें नृत्य भावाभिव्यक्ति का चरम रूप है। माटी की सोंधी गंध से बासित, अनगड़, अटपटे, अधकचरे गीतों की स्वर लहरियां और क्षिप्र पद संचालन, भारतीय संस्कृति की अपनी धरोहर है। जो भारतीय जनजीवन की जीवान्त रसात्मकता का बोध कराती है। जनसुलभ लोकग्राही लोक नृत्य अपने है, केवल अपने।

**सन्दर्भ ग्रन्थ सूची**

1. *भारतीय एवं पाश्चात्य काव्यशास्त्र–भागीरथ मिश्र– पृष्ठ–67*
2. *भारतीय रंगमंच– के0 सी 0वर्मा पृ0 34 कला मन्दिर ग्वालियर*
3. *भारतीय रंगमंच– के0 सी 0वर्मा पृ0 35 कला मन्दिर ग्वालियर*
4. *भारतीय रंगमंच– के0 सी 0वर्मा पृ0 36 कला मन्दिर ग्वालियर*
5. *भारतीय रंगमंच– के0 सी 0वर्मा पृ0 37 कला मन्दिर ग्वालियर*
6. *भारतीय रंगमंच– के0 सी 0वर्मा पृ0 38 कला मन्दिर ग्वालियर*
7. *भारतीय रंगमंच– के0सी0वर्मा, पृ0 39 कला मन्दिर ग्वालियर*